इकाई 3 प्रमुख नाट्यकार एवं उनके नाटक

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 भास

- 3.2.1 जीवन-वृत्त
- 3.2.2 कर्तृत्व
- 3.2.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.3 कालिदास

- 3.3.1 जीवन-वृत्त
- 3.3.2 कर्तृत्व
- 3.3.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.4 शूद्रक

- 3.4.1 जीवन-वृत्त
- 3.4.2 कर्तृत्व
- 3.4.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.5 विशाखदत्त

- 3.5.1 जीवन-वृत्त
- 3.5.2 कर्तृत्व
- 3.5.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.6 हर्ष

- 3.6.1 जीवन-वृत्त
- 3.6.2 कर्तृत्व
- 3.6.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.7 भवभूति

- 3.7.1 जीवन-वृत्त
- 3.7.2 कर्तृत्व
- 3.7.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.8 अन्य नाटककार

- 3.8.1 मुरारि
- 3.8.2 राजशेखर
- 3.8.3 दिङ्नाग
- 3.8.4 जयदेव

3.9 सारांश

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

3.10 शब्दावली

3.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.12 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- भास, कालिदास, शूद्रक आदि नाटककारों के जीवन-वृत्त के विषय में जान सकेंगे।
- भासादि नाटककारों के नाटकों से परिचित होंगे।
- भासादि नाटककारों की शैलीगत विशिष्टताओं से परिचित होंगे।
- संस्कृत नाट्य-साहित्य के कुछ अन्य नाटककारों यथा मुरारि, राजशेखर, दिङ्नाग आदि के विषय में जान सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

इस खण्ड की प्रथम एवं द्वितीय इकाई में आपने संस्कृत नाट्य साहित्य के इतिहास एवं रूपक भेदों का अध्ययन किया। इस इकाई में आप संस्कृत नाट्य साहित्य के प्रमुख नाटककारों यथा भास, कालिदास, शूद्रक, हर्ष आदि के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे। आचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों में रूपक भेदों के लक्षणों को उद्धृत किया है। उन लक्षणों को आधार बनाकर भास कवि ने नाटक एवं एकांकी का प्रणयन किया तो कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकग्निमित्रम् नाटक का प्रणयन कर संस्कृत नाट्य साहित्य के कोश में वृद्धि की। शूद्रक प्रणीत मृच्छकटिक प्रकरण तात्कालिक सामाजिक व्यवस्था को समझने का मुख्य स्रोत है तो विशाखदत्त के मुद्राराक्षस से राजनैतिक विषयों की जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार इस इकाई में आप नाट्य साहित्य के नाटककारों, उनकी रचनाओं और शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.2 भास

भास संस्कृत साहित्य के श्रेष्ठ नाटककार हैं। यहाँ आप उनके जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.2.1 जीवन-वृत्त

संस्कृत नाट्य साहित्य में सर्वप्रथम नाटककार भास का नाम आता है। भास को मानव जीवन के नाना क्षेत्रों को देखने तथा नाटकों को अंकित करने का अवसर मिला इसलिये इनके नाटकों में विविधता विशेष रूप से दृष्टिगोचर होती है। भास संस्कृत साहित्य की एक पहेली भी हैं। 1912 ई0 तक सम्पूर्ण विश्व में संस्कृत के विद्वान् केवल भास के नाम से ही परिचित थे; उनकी रचनाएँ अप्राप्त थीं। 1912 ई0 में केरल के प्रख्यात संस्कृतज्ञ श्री टी. गणपति शास्त्री ने घोषणा की कि उन्हें प्रख्यात नाटककार भास के रूपकों की अब तक अप्राप्त पाण्डुलिपियाँ मिल गयी हैं और अगले वर्ष उन्होंने 13 नाटकों की पाण्डुलिपियों को भासनाटकचक्र के नाम से प्रकाशित कराया।

भास का समय निर्धारण करना कठिन समस्या है। ए.बी. कीथ के मतानुसार भास का समय 300 ई0 के लगभग है। इसके लिये कीथ ने प्रमाण भी दिये हैं। वस्तुतः यह मत इस पूर्वाग्रह पर आधारित है कि कालिदास गुप्तकाल में चौथी पाँचवी शताब्दी में हुए हैं। अब अधिकांश विद्वान् कालिदास का काल प्रथम शताब्दी ई0पू0 मानने के पक्ष में हैं। ऐसे समय में उनका समय 300 ई0 कैसे माना जा सकता है। भास के नाटकों का सामाजिक चित्रण छठीं से चौथी शताब्दी ई0पू0 के भारत की ओर संकेत करता है। उनके नाटकों के भरतवाक्यों में भी नन्दवंश के किसी राजा की ओर संकेत जान पड़ता है। अन्तरंग और बहिरंग दोनों प्रमाणों के आधार पर भास का स्थितिकाल चौथी या पाँचवी शताब्दी ई0पू0 निश्चित होता है।

3.2.2 कर्तृत्व

इसमें कोई सन्देह नहीं कि भास ने कई रूपक लिखे थे। राजशेखर ने भासनाटकचक्र इस संज्ञा का प्रयोग भास की रचनाओं के लिये किया है। यह संज्ञा तभी सम्भव है, जब भास के कई नाटक मिलते हों। भास के नाम से टी. गणपति शास्त्री ने तेरह रूपक प्रकाशित किए। विषयवस्तु की दृष्टि से इनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है।

1) इनमें चार रूपक लोककथा पर आधारित है–
   स्वप्नवासवदत्तम, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, अविमारकम् तथा चारुदत्तम्।
2) छह रूपक महाभारत की कथा को विषय बनाकर लिखे गए हैं–
   मध्यमव्यायोग, पञ्चरात्रम्, दूतवाक्यम्, दूतघटोत्कचम्, कर्णभारम् तथा उरुभंगम्।
3) दो रूपक रामायणाश्रित हैं– प्रतिमानाटकम् तथा अभिषेकनाटकम्।
4) एक रूपक श्रीकृष्ण को प्रस्तुत करने वाला है– बालचरितम्।

वास्तव में इन रूपकों के कर्तृत्व को लेकर विद्वानों में मतभेद है। मुख्य रूप से इस विषय में चार मत प्रचलित हैं। पहले मत के अनुसार ये तेरहों रूपक भास के रचे हुए ही हैं। टी. गणपति शास्त्री, कीथ, लक्ष्मण स्वरूप, देवधर आदि अनेक विद्वान सभी तेरहों रूपकों का प्रणेता महाकवि भास को ही सिद्ध करते हैं।

लोककथा पर आधारित 4 रूपकों का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है–

1) स्वप्नवासवदत्तम् –''स्वप्नवासवदत्तम्'' निःसन्देह विश्व साहित्य में सर्वश्रेष्ठ नाटकों में से एक है। इस नाटक में छः अंक हैं। यह नाटक राजा उदयन की कथा पर आधारित है। मन्त्री यौगन्धरायण का ''वासवदत्ता अग्नौ प्रविष्टा'' ''वासवदत्ता अग्नि में भस्म हो गई'' इस प्रवाद को विस्तृत कर उदयन का पद्मावती से विवाह करने तथा उदयन के अपहृत राज्य का वर्णन है। चरित्र-चित्रण में भास ने अपनी नाट्यकला का अद्भुत चित्र खींचा है। शुद्ध तथा विशद प्रेम का ऐसा वर्णन किया है तथा नाटकीय घटनाओं की ऐसी मनोहारिणी संगति दिखलाई है कि स्वाभाविकता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। वास्तव में यह नाटक संस्कृत साहित्य का एक जाज्वल्यमान रत्न है।

''स्वप्नवासवदत्तम्'' का कथा संविधान कौतुक और नाटकीयता से भरपूर है। नाटकीय विडम्बनाओं और विसंगतियों के अभिप्राय का अत्यन्त मार्मिक प्रयोग नाटक में भास ने किया है। दर्शक तो प्रारम्भ में ही यौगन्धरायण की सारी कूट

योजना से अवगत हो जाते हैं और वे अवंतिका के वेष में नाटक की नायिका वासवदत्ता को आद्यन्त पहचानते रहते हैं पर पद्मावती नहीं जानती कि जिसे साधारण स्त्री बताकर धरोहर के रूप में उसे सौंपा जा रहा है वह कौशाम्बी की महारानी वासवदत्ता है। नाटक के चौथे और पाँचवें अंक तो नाट्यकला और भावजगत् की रचना में अद्वितीय ही हैं।

2) **प्रतिज्ञायौगन्धरायण** – प्रतिज्ञायौगन्धरायण नाटक में चार अंक हैं। इसमें उदयन और वासवदत्ता के प्रेम और विवाह का वर्णन है। मन्त्री यौगन्धरायण द्वारा उदयन को राजा प्रद्योत के यहाँ से छुड़ाने तथा उनकी नीति-वैशिष्ट्य का वर्णन है। नाटकीय संविधान की दृष्टि से ''प्रतिज्ञायौगन्धरायण'' विश्वनाट्यसाहित्य में अपने ढंग का अनोखा नाटक है। वीर रस की भी इस नाटक में विशिष्ट रूप में ही अवतारणा की गयी है। घटनाक्रम का बार-बार अप्रत्याशित रूप में नयी दिशा में मुड़ जाना दर्शकों में कौतूहल बनाये रखता है।

3) **अविमारकम्**– इस नाटक में छः अंक हैं। इसमें राजकुमार अविमारक का राजा कुन्तिभोज की पुत्री राजकुमारी कुरंगी के साथ प्रणय विवाह वर्णित है। लोककथाओं के बहुविध अभिप्राय इसमें संक्रान्त हुए हैं। यह रूपक आद्यन्त विविध घटनाओं के ताने-बाने में बुना हुआ है। इसमें शृंगार रस की प्रधानता है जिसके साथ अद्भुत रस ने कथा में चमत्कार ला दिया है।

4) **चारुदत्तम्**– यह चार अंको का अपूर्ण नाटक है। शूद्रक कृत मृच्छकटिक के प्रथम चार अंको के लगभग सभी संवादों और कथायोजना का इस रूपक से साम्य है। इसमें निर्धन किन्तु उदार ब्राह्मण चारुदत्त और वसन्तसेना नाम की वेश्या के प्रणय सम्बन्ध का वर्णन है। सम्भवतः यह नाटक माननीय भास की अन्तिम कृति है जिसको वे पूर्ण नहीं कर सके।

महाभारत की कथा पर आश्रित छः रूपकों का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है–

5) **मध्यमव्यायोग** –यह एकांकी नाटक है तथा व्यायोग है। मध्यम पाण्डव भीम द्वारा घटोत्कच के हाथ से एक ब्राह्मण पुत्र की रक्षा करना और भीम को पुत्रदर्शन से आनन्दानुभूति तथा हिडिम्बा मिलन का रसास्वाद इस नाटक में वर्णित है।

6) **पञ्चरात्रम्** – इसमें तीन अंक हैं। यज्ञ की समाप्ति पर द्रोण ने दुर्योधन से दक्षिणा माँगी कि पाण्डवों को आधा राज्य दे दो। दुर्योधन ने कहा कि यदि पाँच रात्रि में पाण्डव मिल जायेंगे तो ऐसा कर दूँगा। द्रोण के प्रयत्न से पाण्डवों का मिलना तथा आधा राज्य प्राप्त करना इस नाटक में वर्णित है।

7) **दूतवाक्यम्** – यह भी एक एकांकी नाटक है। महाभारत के युद्ध से पूर्व श्रीकृष्ण का पाण्डवों की ओर से सन्धि प्रस्ताव लेकर दुर्योधन की सभा में जाना और विफल मनोरथ लौटने का इस नाटक में वर्णन है।

8) **दूतघटोत्कच** – यह एकांकी श्रेणी का एक अद्वितीय नाटक है। अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् श्रीकृष्ण का घटोत्कच को दूत रूप से धृतराष्ट्र के पास भेजना, दुर्योधन द्वारा अपमान, अन्त में दुर्योधन का कथन है कि मैं अपने बाणों द्वारा

उनका उत्तर दूँगा इत्यादि कथा इस नाटक में वर्णित है। घटोत्कच शान्ति और सन्धि का आवाहन करता है पर कौरवपक्षीय लोग उसका उपहास करते हैं।

9) **कर्णभार** – कर्णभार भी एकांकी नाटक है। इसमें कर्ण का ब्राह्मण वेषधारी इन्द्र को दान में कवच और कुण्डल देने का वर्णन है।

10) **उरुभंग** – यह एक एकांकी नाटक है। द्रौपदी के अपमान के प्रतिकार स्वरूप भीम द्वारा दुर्योधन की जंघा को भंग करके उसके वध का वर्णन है। संस्कृत साहित्य में यह दुःखान्त नाटक है। उरुभंग में करुण रस प्रधान है। दुर्योधन के चरित्र का अत्यन्त उज्जवल और प्रभावशाली रूप यहाँ अंकित है जो अपनी मृत्यु के समय अपनी उदात्तता और मनुष्य की गरिमा को जिस मार्मिक रूप में प्रस्तुत करता है, वह भारतीय साहित्य में अप्रतिम ही है।

रामायण पर आश्रित दो रूपकों का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है –

11) **प्रतिमानाटकम्** – प्रतिमा तथा अभिषेक इन दोनों नाटकों के द्वारा भास ने रामायण की सम्पूर्ण कथा को नाटकीय स्वरूप में विनयस्त किया है। इस नाटक में सात अंक हैं। राम का वनवास, सीताहरण, रावण वध और राम के राज्याभिषेक इस नाटक के वर्ण्य-विषय हैं। इस नाटक से प्राचीन भारत में कला विषयक नवीन वृत्तान्तों का पता चलता है।

12) **अभिषेकनाटकम्** – इस नाटक में भी छः अंक हैं। इसमें रामायण के किष्किन्धाकाण्ड से युद्धकाण्ड तक की सम्पूर्ण कथा संक्षेप में वर्णित है। अन्त में रावण-वध के पश्चात् राम के राज्याभिषेक का वर्णन किया गया है। यह नाटक वीर रस से परिपूर्ण है।

कृष्ण कथा पर आश्रित रूपक का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है–

13) **बालचरित** – यह रूपक श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं को प्रस्तुत करता है। इसमें श्रीकृष्ण के जन्म से कंसवध तक की कथा वर्णित है। इसमें पाँच अंक हैं। वीर और अद्भुत रसों की निरन्तर व्याप्ति तथा असाधारण पराक्रम के चित्रण के कारण भी यह नाटक उल्लेख्य है।

3.2.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

भास ने अपने नाटकों में वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है। उनकी शैली में प्रसाद, माधुर्य और ओज गुण का समन्वय देखने को मिलता है। उनकी भाषा में एक विचित्र अनूठापन है। वाक्य हैं तो बड़े छोटे-छोटे परन्तु उनमें विचित्र भाव भरा हुआ है–

अहो बलमहो वीर्यमहो सत्त्वमहो जवः।
रामः इत्यक्षरैरल्पैः स्थाने व्याप्तमिदं जगत्।। (प्रतिमानाटक– 5/14)

भास की कविता कामिनी अपने स्वाभाविक पद विन्यास के लिए जितनी प्रसिद्ध है उतनी ही अपने भावों के लिए भी प्रसिद्ध है। पितृभक्ति, पातिव्रत्य, भ्रातृप्रेम, त्याग आदि गुण उनके नाटकों में स्थान-स्थान पर परिलक्षित होते हैं। पातिव्रत्य धर्म का निर्वाहन करते हुए ही सीता राम के साथ वन जाती हैं –

अनुचरति शशाङ्कं राहुदोशेऽपि तारा
पतति च वनवृक्षे याति भूमिं लता च।
त्यजति न च करेणुः पङ्कलग्नं गजेन्द्रं
व्रजतु चरतु धर्मं भर्तृनाथा हि नार्यः।। (प्रतिमानाटक–1/25)

भास मानव हृदय के विकारों के सच्चे पारखी हैं। प्रकृति वर्णन, रस योजना, संवाद कौशल, नाटकीय तत्त्वों के प्रयोग, घटना संयोजन में भास अत्यन्त कुशल हैं। उन्होंने अन्तःप्रकृति और बाह्य प्रकृति दोनों का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया है। उन्होंने प्रकृति वर्णन में प्रसाद गुण का प्रयोग किया है। भास ने प्रतिमानाटक में द्रुत गति से चलते हुए रथ का बड़ा ही स्वाभाविक और सजीव वर्णन किया है –

द्रुमा धावन्तीव द्रुतरथगतिक्षीणविषया
नदीवोद्वृत्ताम्बुर्निपतति मही नेमिविवरे।
अरव्यक्तिर्नष्टा स्थितमिव जवाच्चक्रवलयं
रजश्चाश्वोद्धूतं पतति पुरतो नानुपतति।। (प्रतिमानाटक– 3/2)

भास के नाटकों में मुख्यतया शृंगार और वीर रस का प्रयोग देखा जाता है। उनके नाटकों में करुण, रौद्र, हास्य आदि रस अंग के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। शृंगार रस का वर्णन पाठकों को जितना सहज, सरस और आकर्षक लगता है तो वीर रस का प्रयोग भी पाठकों में उदात्तता और उत्साह का संचार करता है। अलंकारों के प्रयोग में उपमा और स्वभावोक्ति अलंकार पर इनका विशेष स्नेह सहज ही देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त इन्होंने अनुप्रास, यमक, श्लेष, अर्थान्तरन्यास, विरोधाभास आदि अलंकारों का भी प्रयोग किया है। भास संवाद तत्त्व के विशेष मर्मज्ञ हैं इसलिए इनके रूपक शास्त्र की दृष्टि से सरल, सुबोध तथा अभिनेय हैं।

3.3 कालिदास

महाकवि कालिदास का नाम संस्कृत साहित्य में ही नहीं वरन् विश्व साहित्य में बड़े आदर के साथ लिया जाता है। इकाई के इस अंश में आप उनके जीवन-वृत्त, कर्तृत्व और शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.3.1 जीवन-वृत्त

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के श्रेष्ठ कवि एवं नाटककार हैं। इनके जीवन-वृत्त के विषय में अनेक दन्तकथायें प्रचलित हैं। कुछ विद्वान् इन्हें विक्रमादित्य की राजसभा के नवरत्नों में एक मानते हैं किन्तु उन नवरत्नों में जिनके साथ इनकी गणना की गई है वे विभिन्न कालों के हैं और विक्रमादित्य की पहचान करना भी कठिन है। 'भोजप्रबन्ध' नामक कथाग्रन्थ में भोज की राजसभा में संस्कृत के सभी कवियों को दिखाया गया है जिनमें कालिदास प्रमुख थे। एक किंवदन्ती के अनुसार कालिदास सिंहल नरेश कुमारदास के मित्र थे। उनका अन्तिम समय लंका में ही बीता था वहाँ एक वेश्या ने धन के लोभवश इनकी हत्या कर दी थी। कालिदास के विषय में एक किंवदन्ती यह भी प्रचलित है कि ये वज्रमूर्ख थे। इनका विवाह विद्वानों ने षड्यन्त्र रचकर विदुषी विद्योत्तमा से करवा दिया। तदनन्तर पत्नी से तिरस्कृत होकर इन्होंने काली की उपासना की और कवित्व शक्ति अर्जित कर कुमारसम्भवम्, रघुवंशम्, मेघदूतम् जैसे ग्रन्थों की रचना कर संस्कृत साहित्य को समृद्ध बनाया।

महाकवि कालिदास के ग्रन्थों का जब हम अध्ययन करते हैं तो यह ज्ञात होता है कि ये जन्मना ब्राह्मण और शिवभक्त थे। इन्होंने शिव के अतिरिक्त अन्य देवताओं के प्रति भी अपनी श्रद्धा प्रकट की है। रघुवंशम् और मेघदूतम् में जिस प्रकार से भौगोलिक स्थानों का वर्णन किया है उससे यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि इन्होंने भारत की विस्तृत यात्रा की थी। इनकी रचनाओं में कहीं भी कष्ट, दारिद्रय आदि का वर्णन न होने से यह प्रतीत होता है कि इनका भौतिक जीवन सुखद था।

महाकवि कालिदास किस स्थान के निवासी थे? इस विषय में भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान् इन्हें बंगाली, कुछ कश्मीरी, कुछ उज्जयिनी का निवासी सिद्ध करने का प्रयास करते हैं किन्तु महाकवि के उज्जयिनी वर्णन को पढ़कर ऐसी प्रतीति होती है कि इन्होंने उज्जयिनी को बड़े ही निकट से देखा और समझा है। मेघदूतम् में इन्होंने उज्जयिनी नगरी के प्रति जिस प्रकार का आदरभाव व्यक्त किया है उससे यह कहा जा सकता है कि ये उज्जयिनी के निवासी थे।

महाकवि का काल निर्धारण करना भी विद्वानों के समक्ष किसी चुनौती से कम नहीं था। इस विषय में भी विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रकट किए हैं और उनके काल को सिद्ध करने का प्रयास किया है। विद्वानों ने इन्हें प्रथम शताब्दी ई.पू., तृतीय शताब्दी ई., चतुर्थ शताब्दी ई. का उत्तरार्द्ध, पंचम शताब्दी ई. का स्वीकार किया है और इस पक्ष में अपने मत भी प्रस्तुत किए हैं। इन मतों में प्रथम शताब्दी ई.पू. का मत नितान्त सटीक जान पड़ता है जो अधिकांश विद्वानों को मान्य है।

3.3.2 कर्तृत्व

महाकवि कालिदास की सात कृतियाँ प्रसिद्ध हैं जिनमें रघुवंशम् और कुमारसम्भवम् महाकाव्य, ऋतुसंहार और मेघदूतम् गीतिकाव्य तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकाग्निमित्रम् नाटक है। कालिदास विरचित नाटकों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

1) **मालविकाग्निमित्रम्** – मालविकाग्निमित्रम् के पाँच अंकों में राजा अग्निमित्र तथा मालविका के विवाह की कथा वर्णित है। विपत्तियों से ग्रस्त मालविका वन में वीरसेन को प्राप्त होती है जो उसे धारिणी के पास पहुँचा देता है। वहाँ वह दासी के रूप में रहती है किन्तु अग्निमित्र की प्रेयसी बन जाती है। गणदास मालविका को नृत्य संगीत की शिक्षा देते हैं। धारिणी मालविका को राजा से दूर रखने का प्रयत्न करती है किन्तु राजा उसे चित्र में देखकर उस पर मुग्ध हो जाता है। विदूषक मालविका को राजा के समक्ष लाने का प्रयास करता है। इसी बीच नाट्यादास गणदास और हरदत्त के बीच योग्यता को लेकर विवाद हो जाता है। उसका निर्णय करने के लिए कैशिकी के आदेशानुसार दोनों आचार्य अपनी शिष्याओं से नृत्य और अभिनय कराने की बात मान लेते हैं। द्वितीय अंक में मालविका का नृत्य होता है और गणदास की विजय होती है। इस प्रदर्शन को देखकर राजा मालविका पर अत्यन्त मुग्ध हो जाता है। तृतीय अंक में प्रमदवन में राजा और मालविका की भेंट होती है। चतुर्थ अंक में धारिणी मालविका और उसकी सखी को कारागार में डाल देती है। विदूषक रानी की अगूँठी दिखाकर उन दोनों को कारागार से मुक्त कराता है। पंचम अंक में विदर्भ से आई दो सेविकाओं से रानी को मालविका का परिचय मिलता है वह अग्निमित्र और मालविका का विवाह करा देती है।

2) **विक्रमोर्वशीयम्** – विक्रमोर्वशीयम् पाँच अंकों का त्रोटक नाम उपरूपक है। इसमें राजा पुरुरवा और उर्वशी की प्रणय कथा का वर्णन है। पुरुरवा केशी राक्षस से आक्रान्त उर्वशी की रक्षा करता है। राजा और उर्वशी एक दूसरे पर आसक्त हो जाते हैं। विदूषक की अकुशलता से उर्वशी का प्रेमपत्र देवी औशीनरी को मिल जाता है। वह राजा पर कुपित होती है। राजा किसी प्रकार उसका क्रोध शान्त करते हैं। स्वर्ग में भरत द्वारा निर्देशित एक नाटक में उर्वशी अभिनय करते हुए 'पुरुषोत्तम विष्णु' के स्थान पर पुरुरवा का नाम ले लेती है। कुपित होकर भरतमुनि उसे पुत्रदर्शन तक मृत्युलोक में रहने का शाप देते हैं। वह राजा पुरुरवा के पास रहने लगती है। राजा पर कुपित होकर उर्वशी एकदिन गन्धमादन उपवन में चली जाती है। वहाँ शापवश वह लता बन जाती है। शोक से व्याकुल राजा आकाशवाणी के अनुसार संगमनीय मणि लेकर लतारूपी उर्वशी का आलिंगन कर उसको पूर्वरूप में ले आते हैं। च्यवन ऋषि के आश्रम में उर्वशी को अपने पुत्र का दर्शन होता है और उर्वशी स्वर्ग चली जाती है। नारद इन्द्र लोक से आकर यह सूचना देते हैं कि इन्द्र को युद्ध में पुरुरवा की सहायता चाहिए। पुरुरवा इन्द्र की सहायता करते हैं। इन्द्र उर्वशी को सदैव पुरुरवा के साथ रहने का वर देते हैं और भारतवाक्य के साथ नाटक की समाप्ति हो जाती है।

3) **अभिज्ञानशाकुन्तलम्**– अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक समग्र संस्कृत साहित्य का सर्वोत्कृष्ट नाटक है। इसमें कुल सात अंक हैं। इसमें दुष्यन्त और शकुन्तला के प्रणय, वियोग तथा पुनर्मिलन की कथा वर्णित है। हस्तिनापुर के राजा दुष्यन्त मृगया करते हुए संयोगवश कण्व ऋषि के आश्रम में पहुँच जाते हैं जहाँ उनका शकुन्तला से साक्षात्कार होता है। उसके जन्म की कथा सुन लेने के बाद उनके हृदय में उस मुनिकन्या के प्रति अनुराग उत्पन्न होता है। शकुन्तला भी आभिजात्य और पौरुष की प्रत्यक्ष प्रतिमा महाराज दुष्यन्त के प्रति आकर्षित होती है। दोनों गान्धर्व विधि से विवाह-सूत्र में बँध जाते हैं। इस नाटक की कथावस्तु का विस्तृत अध्ययन आप इकाई 12 में करेंगे।

3.3.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

कालिदास की नाट्यकला संस्कृत साहित्य का गौरव है और पूर्णतया मौलिक है। वे भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि कवि हैं। माधुर्य का मधुर सन्निवेश, प्रसाद की स्निग्धता, पदों की सरस शय्या, अर्थ का सौष्ठव, अलंकारों का मंजुल रसमय प्रयोग, जो कुछ उन्नत काव्य की विशेषताएं हैं वे उनके काव्यों में विद्यमान है। शृंगार, करुण, वीर आदि सभी रसों की सफल अभिव्यक्ति है। रीति एवं प्रसादादि गुण तथा नाटकीय संविधान सभी उच्चकोटि के हैं। उपमा के लिये तो कालिदास प्रसिद्ध हैं **''उपमाकालिदासस्य''**। अन्त में हम यह कह सकते हैं कि कालिदास की सर्वतोन्मुखी प्रतिभा, उनकी महाकाव्य, नाटक तथा खण्डकाव्य की रचना में अपूर्व क्षमता, उनकी प्रसाद तथा लालित्यपूर्ण शैली, उनकी नित-नूतन कल्पनाएं, उनका शब्दलाघव और आवश्यकतानुकूल अलंकारो की छटा देखकर उनको न केवल संस्कृत के साहित्य में वरन् विश्व साहित्य में भी विशिष्ट स्थान प्रदान करने को हम विवश हैं। कालिदास की कविता कामिनी के वैभव को देखकर ही उनको ''कविकुलगुरु कालिदासो विलासः'' कविता का विलास कहा गया है। प्रिय विद्यार्थियों! आप कलिदास के शैलीगत वैशिष्ट्य का विस्तृत अध्ययन इकाई 12 में करेंगे।

3.4 शूद्रक

इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक नामक प्रकरण के प्रणेता शूद्रक के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.4.1 जीवन-वृत्त

प्रसिद्ध प्रकरण ''मृच्छकटिक'' के रचयिता राजा शूद्रक को कुछ विद्वान् एक कल्पित व्यक्ति मानते हैं। शूद्रक के व्यक्तित्व पर अभी तक प्रामाणिक रूप से कोई प्रमाण नहीं मिलता है। इस विषय में ऐतिहासिक अनुसन्धान की आवश्यकता है। संस्कृत साहित्य में शूद्रक के विषय में अनेक दन्तकथाएँ प्रचलित हैं। ''कादम्बरी'', ''कथासरित्सागर'', ''वेतालपंचविंशतिका'', ''हर्षचरित'', ''राजतरंगिणी,'' ''स्कन्दपुराण'' आदि ग्रन्थों में शूद्रक का उल्लेख प्राप्त होता है। ''मृच्छकटिक'' की प्रस्तावना में शूद्रक का परिचय दो श्लोकों में दिया गया है। उसमें उनकी मृत्यु का भी वर्णन है किन्तु किसी भी कवि का अपनी ही रचना में स्वयं अपनी मृत्यु का उल्लेख करना असम्भव है। अतः प्रस्तावना में ये श्लोक प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं। कीथ का मत है कि किसी अज्ञात कवि– रौमिल या सौमिल्ल या दोनों– ने भास के ''चारुदत्त'' नाटक को परिवर्धित कर उसे ''मृच्छकटिक'' का नाम दिया और प्रसिद्ध राजा शूद्रक के नाम से उसे प्रचारित किया।

मृच्छकटिक के रचनाकाल का विचार करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। कालिदास के नाटकों में ''मृच्छकटिक'' की कुछ छाप दृष्टिगोचर होती है। कालिदास का समय लगभग 100 ई0पू0 है। अतः मृच्छकटिक की रचना इससे कुछ पूर्व अवश्य हो चुकी होगी। कालिदास के अनुसार ''मृच्छकटिक'' के रचयिता रौमिल और सौमिल्ल रहे होंगे क्योंकि इन्हीं का उल्लेख उन्होंने अपने ''मालविकाग्निमित्रम्'' में किया है। अतः मृच्छकटिक कालिदास के पूर्व की रचना है। मृच्छकटिक में आठ प्रकार की प्राकृत भाषाओं का प्रयोग हुआ है। अतः मृच्छकटिक की रचना इन ग्रन्थों से पहले ही हुई होगी। ''मृच्छकटिक'' भास के ''चारुदत्त'' नाटक का परिवर्धित रूप जान पड़ता है। अतः इसकी रचना भास के बाद अर्थात् तृतीय शताब्दी ई0पू0 में हुई होगी। मृच्छकटिक का कर्त्ता दाक्षिणात्य (महाराष्ट्र) का निवासी है ऐसा प्रतीत होता है। उज्जयिनी में दक्षिण के लोग भी राज्य के पदों पर प्रतिष्ठित रहा करते थे। चन्दनक ऐसा ही एक पदाधिकारी था। इसी हेतु मृच्छकटिक के वर्णनों में दक्षिण भारत में प्रचलित शब्दों का प्रयोग तथा प्रथाओं का वर्णन मिलता है। दण्डी के कथन से भी शूद्रक की राजधानी उज्जयिनी ही प्रकट होती है।

3.4.2 कर्तृत्व

शूद्रक की केवल एक कृति ''मृच्छकटिक'' ही उपलब्ध है। दण्डी तथा वामन इत्यादि के उल्लेखों से प्रतीत होता है कि शूद्रक की अन्य भी कोई रचना रही होगी किन्तु वह आज उपलब्ध नहीं है। कुछ वर्ष पूर्व 'पद्यप्राभृतक'' नामक एक ''भाण'' दक्षिण भारत में प्रकाशित हुआ है। इसके सम्पादक का कथन है कि मृच्छकटिक के कर्त्ता की ही रचना है। अभी इसकी वास्तविकता के विषय में कुछ कहना कठिन है। सम्पादक श्री बल्लभदेव ने यह भी बतलाया है कि ''वत्सराजचरित'' (वीणावासवदत्त) भी शूद्रक की तृतीया रचना है तथा सम्भवतः शूद्रक की चतुर्थ रचना ''कामदत्त'' नामक एक प्रकरण ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सम्भवतः

इनके अनुशीलन से मृच्छकटिक के रचयिता के जीवन तथा समय पर विशेष प्रकाश पड़ सकेगा।

1) **मृच्छकटिक** – ''मृच्छकटिक'' 10 अंकों का एक प्रकरण है। पहले अंक का नाम 'अलंकारन्यास' है। प्रथम अंक में रास्ते में अँधेरी रात में विट तथा चेट के साथ शकार वसन्तसेना का पीछा कर रहा है। दूसरे अंक का नाम 'द्यूतकर संवाहक' है। संवाहक पहले चारुदत्त की सेवा में था वह जुएँ में बहुत सा धन हार जाता है। तीसरे अंक का नाम 'सन्धिच्छेद' है, वसन्तसेना की दासी मदनिका को शर्विलक सेवा से मुक्त कराना चाहता है। अतः वह चारुदत्त के घर में आभूषणों की चोरी करता है। चतुर्थ अंक का नाम 'मदनिका शर्विलक' है जिसमें शर्विलक आभूषणों को लेकर वसन्तसेना के घर जाता है। वसन्तसेना मदनिका को सेवा मुक्त कर देती है। पाँचवे अंक का नाम 'दुर्दिन' है। इसमें वर्षा का विस्तृत वर्णन है। षष्ठ अंक का नाम 'प्रवहण विपर्यय' है इसमें वसन्सेना भूलवश शकार की गाड़ी मे बैठ जाती है और आर्यक चारुदत्त की गाड़ी मे बैठ जाता है। सप्तम अंक का नाम 'आर्यकापहरण' है। इसमें चारुदत्त आर्यक के बन्धन कटवाकर उसे अभयदान प्रदान करता है। अष्टम अंक का नाम 'वसन्तसेनामोटन' है। इसमें शकार का प्रणय निवेदन अस्वीकार करने पर वह वसन्तसेना का गला घोंट देता है। नवम अंक का नाम 'व्यवहार' है। शकार चारुदत्त पर वसन्तसेना को मारने का अभियोग लगाता है। 'संहार' नामक दशम अंक में उसी समय राज्य परिवर्तन होता है। वसन्तसेना के साथ चारुदत्त का विवाह सम्पन्न होता है। इसी के अन्तिम मिलन के साथ यह रुपक समाप्त होता है।

3.4.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

संस्कृत साहित्य में 'मृच्छकटिक' का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह अत्यन्त लोकप्रिय प्रकरण है। 'मृच्छकटिक' संस्कृत का एकमात्र यथार्थवादी रूपक है। इस प्रकारण में शूद्रक ने बड़ी कुशलता से प्रेम के कथानक को राजनीतिक घटनाओं के साथ सम्बद्ध किया है। इसकी कथावस्तु में घटनाचक्र की गतिशीलता है। सम्पूर्ण कथावस्तु दृढ़ सूत्र में बँधी हुई है जिसकी कथा सामाजिक के चित्त को अपनी ओर आकर्षित करती है। चरित्र-चित्रण की ओर यदि दृष्टिपात् करें तो यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि मृच्छकटिक में सभी प्रकार के पात्रों की सृष्टि कर शूद्रक ने तत्कालीन समाज का बड़ा ही सजीव एवं यथार्थ चित्र उपस्थित किया है। 25 पुरुष पात्रों तथा 7 स्त्री पात्रों से युक्त यह प्रकरण सामान्य समाज को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने में पूर्ण समर्थ है। चारुदत्त, विदूषक (मैत्रेय), वसन्तसेना, मदनिका, शर्विलक, शकार, विट, चेट आदि सभी पात्र अपने-अपने चरित्र के अनुरूप भावों को अभिव्यक्त करते हैं।

शूद्रक ने गद्य और पद्य दोनों के लिए सरल शैली का प्रयोग किया है। उनके संवाद सरल तथा संक्षिप्त हैं। उनमें वाग्विदग्धता तथा व्यंग्य का दर्शन होता है। शूद्रक के संवाद सरल तथा संक्षिप्त हैं उनमें 'वाग्विदग्धता' तथा व्यंग्य का दर्शन होता है। हास्य रस की अभिव्यंजना में तो यह संस्कृत साहित्य का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। मृच्छकटिक नाटक का प्रत्येक पात्र अपना निजी व्यक्तित्व लेकर सामने आता है। यह रूपक अनेक पद्यों एवं सूक्तियों से सुशोभित है। इनमें कहीं व्यावहारिक आदर्श है, कहीं जीवन की शिक्षाएं हैं तथा कहीं काव्य सौन्दर्य विद्यमान है। इसकी भाषा-शैली सरल एवं रोचक है। वह नाट्य के सर्वथा अनुकूल है। यहाँ पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। विविध प्राकृत भाषाओं के सफल प्रयोग की दृष्टि से तो मृच्छकटिक अद्वितीय

है। मृच्छकटिक में तत्कालीन समाज का सच्चा चित्रण प्राप्त होता है। केवल राजवर्ग या भ्रान्तवर्ग को ही नहीं, अपितु सामान्य समाज को भी शूद्रक ने बड़े सुन्दर ढंग से चित्रित किया है। अतः मृच्छकटिक एक जनकाव्य है।

3.5 विशाखदत्त

एकमात्र राजनीतिक नाटक 'मुद्रराक्षस' की रचना कर संस्कृत साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाने वाले विशाखदत्त का विशेष स्थान है। यहाँ आप उनके जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.5.1 जीवन-वृत्त

एकमात्र राजनीतिक नाटक 'मुद्रराक्षस' के प्रणेता विशाखदत्त का संस्कृत नाट्य साहित्य में विशेष स्थान है। मुद्राराक्षस की प्रस्तावना से यह ज्ञात होता है कि विशाखदत्त राजपरिवार में उत्पन्न हुए थे। इनके पिता महाराज पृथु एवं पितामह वटेश्वरदत्त थे। परिणामतः राजनीति के क्षेत्र में इनकी विशेष रुचि थी। शायद यही कारण रहा होगा कि इन्होंने मुद्राराक्षस जैसे नाटक का प्रणयन किया। कुछ लोग 'देवीचन्द्रगुप्त' को भी विशाखदत्त की ही रचना मानते हैं। नाट्यदर्पण एवं भोज के शृङ्गारप्रकाश से इस नाटक के विषय में जानकारी मिलती है। छः या सात अंकों के इस नाटक में भी विशाखदत्त ने चन्द्रगुप्त द्वितीय के द्वारा शकों की पराजय एवं सौराष्ट्र विजय का वर्णन किया है।

मुद्राराक्षस नाटक में विशाखदत्त मगध के प्रति विशेष आदरभाव प्रदर्शित करते हैं। पाटलिपुत्र एवं उसके समीपवर्ती क्षेत्रों के वर्णन से ऐसी प्रतीति होती है कि ये मगध के निवासी थे, उसी राज्य के प्रमुख सामन्तों के परिवार में इनका जन्म हुआ था। इनकी पारिवारिक उपाधि दत्त थी। इन्होंने मुद्राराक्षस के मंगलाचरण में शिव की तथा भरतवाक्य में विष्णु की स्तुति की है, अतः इन्हें ब्राह्मण धर्म का अनुयायी कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त मुद्राराक्षस में बौद्ध धर्म के वर्णन से यह प्रतीत होता है कि बौद्ध धर्म के प्रति भी वे श्रद्धा का भाव रखते थे।

विशाखदत्त के काल निर्धारण में अन्तःसाक्ष्य एवं बहिःसाक्ष्य का आश्रय लिया जाता है। अन्तःसाक्ष्यों पर यदि दृष्टिपात् करें तो मुद्राराक्षस के भरतवाक्य में म्लेच्छों के आक्रमण की चर्चा, प्रस्तावना में वर्णित चन्द्रग्रहण तथा जैन और बौद्ध धर्म के प्रति उनके विचार उनका काल निर्धारण करने में साक्ष्य उपस्थित करते हैं। मुद्राराक्षस में 'पार्थिवोऽवन्विर्मा', 'पार्थिवो दन्तिवर्मा' आदि पाठ मिलते हैं। उन्होंने गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य (375-423 ई.) की ओर संकेत किया है। ये अवन्तिवर्मा कन्नौज के मौखरि राजा थे जिनका समय छठीं शताब्दी ई. का उत्तरार्द्ध था। इस आधार पर विशाखदत्त का समय 550-600 ई. माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त भरतवाक्य में म्लेच्छों के आक्रमण और उनकी पराजय, चन्द्रग्रहण और विशाखदत्त की जैन और बौद्ध धर्म के प्रति आस्था भी इन्हें 600 ई. से पूर्व का ही सिद्ध करती है।

बहिःसाक्ष्यों में दशरूपक और सरस्वतीकण्ठाभरण में मुद्राराक्षस के श्लोक प्राप्त होते हैं किन्तु यह ग्रन्थ नितान्त बाद के हैं। अतः इनके आधार पर विशाखादत्त का काल निर्धारण करना उचित नहीं होगा।

3.5.2 कर्तृत्व

सुभाषित ग्रन्थों में दिए गए उद्धरणों से पता चलता है कि विशाखदत्त ने ''मुद्राराक्षस'' और ''देवीचन्द्रगुप्त'' के अतिरिक्त ''राघवानन्द'' नामक एक और नाटक की रचना की थी, पर यह कृति अब उपलब्ध नहीं है।

1) **मुद्राराक्षस** – विशाखदत्त प्रणीत मुद्राराक्षस भारतीय कूटनीति से ओत-प्रोत एक ऐतिहासिक नाटक है। वीर रस प्रधान इस नाटक का नायक चाणक्य है। नायिका एवं विदूषक रहित सात अंकों वाले इस नाटक में चाणक्य व आमात्य राक्षस के बुद्धिकौशल का विशाखदत्त ने वर्णन किया है। इस नाटक के प्रथम अंक में चाणक्य को राक्षस के तीन विश्वासपात्र सम्बन्धियों क्षपणक जीवसिद्धि, कायस्थ शकटदास तथा श्रेष्ठी चन्दनदास के सम्बन्ध में गुप्तचरों से सूचना मिलती है तथा राक्षस की एक मुद्रा भी प्राप्त होती है, जो राक्षस की पराजय का कारण बनती है। द्वितीय अंक में राक्षस की कूटनीतिक पराजय का प्रथम दर्शन होता है। चाणक्य की जागरुकता के परिणामस्वरूप चन्द्रगुप्त की हत्या की राक्षस की योजना विफल हो जाती है। तृतीय अंक में कौमुदी महोत्सव निषेध का वर्णन किया गया है। नाटक के चतुर्थ अंक में राक्षस को अपनी योजना की असफलता का पता चलता है। राक्षस पर्वतेश्वर के पुत्र मलयकेतु से सम्पर्क स्थापित कर उसे चन्द्रगुप्त की जगह नन्दवंश के सिंहासन पर बैठाने की योजना बनाता है। पंचम अंक में नाटक की मुख्य कथा का वर्णन है। इस अंक में मुद्रित लेख तथा आभूषण के साथ सिद्धार्थक पकड़ा जाता है परिणामस्वरूप मलयकेतु का विश्वास राक्षस से हट जाता है और वह राक्षस का विरोधी बन जाता है। राक्षस के विरोध के परिणामस्वरूप मलयकेतु अपने सहयोगियों के साथ पकड़ लिया जाता है तथा राक्षस को पकड़ने का प्रयास किया जाता है। छठें अंक में राक्षस चन्दनक की प्रवृत्ति जानने के लिए कुसुमपुर लौट जाता है जहाँ उसे चन्दनदास को दिए जाने वाले मृत्युदण्ड की सजा की सूचना मिलती है। सातवें अंक में चन्दनदास को फाँसी के लिए वधस्थान पर ले जाया जाता है, जहाँ उसकी पत्नी व पुत्र विलाप कर रहे हैं। स्वयं को इस विपत्ति से बचाने के लिए उसका मित्र राक्षस वहाँ उपस्थित होता है और चाणक्य की मित्रता स्वीकार कर चन्द्रगुप्त का आमात्य बनना स्वीकार करता है। इसी घटना के साथ नाटक का अन्त होता है।

3.5.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

विशाखदत्त प्रणीत मुद्राराक्षस नाटक अनेक दृष्टियों से संस्कृत साहित्य में अद्वितीय है। विशाखदत्त ने पारम्परिक नाट्य विषयों के समान इस नाटक में न तो प्रणय का वर्णन किया है और न ही नायिका और विदूषक को नाटक का पात्र बनाया है। विशाखदत्त का यह नाटक पाठकों के लिए ऐतिहासिक तथ्यों एवं चरित्रों को जानने और समझने का एक कोश है। वास्तव में वीर रस प्रधान यह नाटक आदि से लेकर अन्त तक ओजस्विता, पौरुष और ऊर्जस्व से ओत-प्रोत है।

मुद्राराक्षस नाटक में कुल 29 पात्र हैं, इसमें चन्दनदास की पत्नी एकमात्र स्त्री पात्र है जो सप्तम अंक में दिखाई देती है। शेष सभी पात्र अपनी-अपनी चारित्रिक विशिष्टताओं के अनुरूप चाणक्य तथा राक्षस के कार्य में सहयोग देते हैं। सम्पूर्ण नाटक में इन दोनों पात्रों के संघर्ष का ही वर्णन प्राप्त होता है। मुद्राराक्षस की शैली प्रवाह,

प्रसादिकता और ओज लिए हुए है। इसके वाक्य छोटे-छोटे और मुहावरेदार हैं। दीर्घ समास-बहुल पदावली का प्रयोग कम हुआ है। अलंकारों का प्रयोग सीमित मात्रा में ही किया गया है। विशाखदत्त ने पद्यों के बाहुल्य से अपनी नाटकीय शैली को कृत्रिम नहीं बनाया है। उनका शब्द-विन्यास बड़ा ही सशक्त और प्रभावशाली है। पद्य की अपेक्षा उनका गद्य अधिक ओजपूर्ण है। कहीं-कहीं व्यंग्यपूर्ण हास्य का भी पुट दिया गया है। संलापों में स्वाभाविकता है। नपे-तुले शब्दों में जोरदार भाषा प्रयुक्त हुई है। मुद्राराक्षस में नाटककार ने श्लेष का अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग किया है। यह श्लेष अधिकतर व्यंग्यार्थ में ही प्रयुक्त हुआ है। विशाखदत्त के गद्य में जहाँ ओज है वहाँ उनके पद्यों में स्थल-स्थल पर लालित्यमय प्रवाह है।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित प्रश्नों में सत्य तथा असत्य कथन का चयन कीजिए –

i) महाकवि भास ने 12 नाटकों का प्रणयन किया – ( )

ii) चारुदत्तम् नाटक में चार अंक हैं – ( )

iii) महाकवि कालिदास विक्रमादित्य के नवरत्नों में एक थे – ( )

iv) मृच्छकटिक के प्रणेता विशाखदत हैं – ( )

v) मृच्छकटिक एक प्रकरण ग्रन्थ है – ( )

vi) मुद्राराक्षस ऐतिहासिक नाटक है – ( )

अभ्यास प्रश्न 1

1) भास कवि की शैलीगत वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।

2) कालिदास के नाटकों पर संक्षेप में लिखिए।

3) विशाखदत्त का जीवन परिचय लिखिए।

3.6 हर्ष

इकाई के इस अंश में आप हर्ष के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.6.1 जीवन-वृत्त

संस्कृत साहित्य के लिए यह सौभाग्य की बात है कि हर्ष के विषय में जानने और समझने के लिए हमारे पास पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है। बाण ने हर्षचरित में तथा चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने यात्रा विवरण में हर्ष के जीवन और व्यक्तित्व से सम्बन्धित पक्षों को उद्धृत किया है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि 606 ई. से 648 ई. तक हर्ष का शासन काल था। ह्वेनसांग ने भी हर्ष के शासन में ही 629 ई. से 641 ई. के मध्य भरत का भ्रमण किया था। वह बहुत दिनों तक हर्ष की राजसभा में ही रहा।

हर्ष के पिता प्रभाकरवर्धन ने 588 ई. में अवन्तिवर्मा के साथ मिलकर हूणों को परास्त किया था। प्रभाकरवर्धन के तीन पुत्रों में हर्ष का स्थान दूसरा है। हर्ष ने अपनी कूटनीति से बाल्यावस्था में ही अपने राज्य स्थाणीश्वर को इतना विस्तृत कर लिया कि पूरा उत्तरी भारत उसके अधिकार में आ गया। हर्ष केवल वीर ही नहीं अपितु श्रेष्ठ

विद्वान् और कवि भी थे। इन्होंने प्रियदर्शिका, रत्नावली तथा नागानन्द नामक तीन नाटकों की रचना की है।

3.6.2 कर्तृत्व

महाकवि हर्ष ने तीन नाटकों की रचना की है। 'प्रियदर्शिका', 'रत्नावली' और 'नागानन्द'। इन कृतियों के सम्बन्ध में कुछ आलोचकों का कहना है कि ये हर्ष की रचनाएँ नहीं हैं। उन्होंने अपने किसी आश्रित कवि (बाण का धावक) द्वारा उन्हें लिखवाकर अपने नाम से प्रचलित किया। इतना तो निश्चित है कि उक्त तीनों रचनाएँ एक ही कवि की लेखनी से प्रसूत हैं क्योंकि इन तीनों नाटकों की प्रस्तावना में एक ही रचयिता हर्ष का उल्लेख हुआ है।

'प्रियदर्शिका' और 'नागानन्द' में दो श्लोक समान हैं तथा एक श्लोक 'प्रियदर्शिका' और 'रत्नावली' में भी अभिन्न है। इन तीनो नाटकों की शैली में भी पूर्ण साम्य है। अब प्रश्न यह होता है कि इनके रचयिता कौन थे? कुछ टीकाकारों के अनुसार धावक नामक किसी कवि ने रत्नावली आदि की रचना हर्ष के नाम से करके प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी किन्तु इस किंवदन्ति के समर्थन में कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता। हर्ष स्वयं एक अच्छे कवि थे। बाण ने उनकी काव्य चातुरी की प्रशंसा अपने हर्षचरित में की है। जयदेव ने उन्हें ''कविताकामिनी का हर्ष'' कहा है। अतः यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि इन तीनों नाटकों की रचना हर्ष की लेखनी से ही हुई है।

1) **प्रियदर्शिका** – प्रियदर्शिका हर्ष की प्रथम रचना है। प्रियदर्शिका का सम्बन्ध भी उदयन के कथाचक्र के साथ है, यह भी चार अंकों की एक प्रणय नाटिका है। इसमें राजा उदयन के अन्तःपुर की प्रेम कहानी चित्रित है। इस नाटिका में तथा कालिदास के मालविकाग्निमित्रम् में पर्याप्त साम्य दृष्टिगोचर होता है। राजा दृढवर्मा युद्ध में हार जाते हैं। उनकी कन्या प्रियदर्शिका दुर्घटना के कारण राजा उदयन के अन्तःपुर में पहुँच जाती है। वहाँ वह आरण्यिका नाम से रानी की दासी बनकर रहती है। उदयन उस पर मुग्ध हो जाते हैं। अन्तःपुर के रंगमंच पर उदयन और वासवदत्ता के विवाह का अभिनय होता है, जिसमें आरण्यिका वासवदत्ता बनती है और उदयन स्वयं उदयन। यह अभिनय प्रेम का अभिनय न रहकर वास्तविक हो जाता है। वासवदत्ता क्षुब्ध होकर अरण्यिका को कारागार में डाल देती है। अरण्यिका के विषपान कर लेने पर उसको विष उतारने वाले उदयन के समक्ष लाया जाता है। तभी दृढवर्मा का कंचुकी मूर्च्छित राजकुमारी को पहचान लेता है। इससे वासवदत्ता को पश्चाताप होता है और वह राजा और अरण्यिका का विवाह करवा देती है। अपनी प्रसादिक शैली, वस्तु रचना की सरलता, अनेक रोचक घटनाओं एवं अवस्थाओं की सृष्टि तथा कतिपय उत्कृष्ट वर्णनों द्वारा हर्ष अपनी प्रियदर्शिका नाटिका को रोचक बनाने में सफल हुए।

2) **रत्नावली** – रत्नावली संस्कृत साहित्य की सफल नाटिका है। रत्नावली में चार अंक हैं। इसमें वत्सराज उदयन तथा उनकी रानी वासवदत्ता की परिचारिका सागरिका की रोचक प्रेम-कथा वर्णित है। नायिका वास्तव में सिंहल देश की राजकन्या रत्नावली है, जो दुर्घटनावश दासी का कार्य कर रही है। अन्त में इस रहस्य का उद्घाटन होने पर नायक-नायिका का विवाह हो जाता है। रत्नावली में प्रधान रस शृंगार है। इसका नायक धीरललित है। कथानक कौतूहल से परिपूर्ण है। घटनाएँ नाटकीय ढंग से घटित होती हैं। रत्नावली अभिनय की

दृष्टि से भी सफल कृति है। वेष विपर्यय का दृश्य बड़ा रोचक हुआ है। काव्य सौन्दर्य के साथ-साथ इसमें चरित्र-चित्रण भी विशद् हुआ है। नाट्यशास्त्र के नियमों का इसमें पूर्णतया पालन हुआ है।

3) **नागानन्द** – नागानन्द में पाँच अंक हैं। जीमूतवाहन नामक राजकुमार के आत्मत्याग का बौद्ध आख्यान इसमें वर्णित है। जीमूतवाहन एक विद्याधर राजकुमार है। राजा मित्रवसु की भगिनी मलयवती से उसका विवाह होता है। एकदिन मित्रवसु के साथ टहलते समय जीमूतवाहन हड्डियों का ढेर देखता है। उसे ज्ञात होता है कि दिव्य पक्षी गरुड़ को प्रतिदिन साँपो की भेंट चढ़ाई जाती है। यह उन्हीं मरे हुए साँपो की हड्डियों का ढेर है। वह निश्चय करता है कि मैं प्राणों का बलिदान करके भी इस हत्याकांड को रोकूँगा।

नागानन्द पर ''बौद्धधर्म'' की छाप स्पष्ट दिखाई पड़ती है। नायक और मलयवती के प्रेम का भी इस नाटक मे वर्णन किया गया है। प्राणियों के प्रति दया तथा आत्मोत्सर्ग की भावना का इस नाटक में सुन्दर निदर्शन हुआ है।

3.6.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

हर्ष के नाटकों में कथानक का संयोजन, चरित्र-चित्रण, रस-योजना, अलंकार योजना आदि का सुन्दर समन्वय प्राप्त होता है। प्रियदर्शिका नाटिका में गर्भनाटक की कल्पना तथा रत्नावली नाटिका में ऐन्द्रजालिक का समावेश कवि की उन्मुक्तता का परिचायक है। उनके नाटकों के अन्त में अद्भुत रस का सुन्दर समन्वय देखा जा सकता है। हर्ष की रत्नावली नाटिका नाट्यशास्त्रियों के बीच अत्यधिक लोकप्रिय रही है।

हर्ष ने अपने रूपकों में वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है। उनके रूपकों की भाषा नितान्त सहज, सरस एवं प्रसादपूर्ण है। उनमें दुरूह शब्दों और कठिन समासों का प्रायः अभाव है। उन्होंने अपने नाटकों में विलासमय प्रणय का सुन्दर चित्रण करने के साथ भारतीय मर्यादा की रक्षा भी की है। शृंगार, अद्भुत, शान्त, हास्य, करुण आदि रसों का सुन्दर प्रयोग इनके नाटकों की विशेषता है।

3.7 भवभूति

उत्तररामचरितम् नाटक के प्रणेता भवभूति का संस्कृत साहित्य में विशेष स्थान है। इकाई के इस अंश में आप भवभूति के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.7.1 जीवन-वृत्त

संस्कृत साहित्य में भवभूति एक श्रेष्ठ नाटकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इन्होंने मालतीमाधव की प्रस्तावना में अपने विषय में उल्लेख किया है जिससे यह ज्ञात होता है कि ये पद्मपुर के निवासी थे। यह नगर प्राचीन वाकाटक नरेशों की राजधानी के रूप में प्रतिष्ठित था। इनका जन्म काश्यप गोत्र के तैत्तिरीय शाखाध्यायी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पितामह का नाम भट्टगोपाल, पिता का नाम नीलकण्ठ तथा माता का नाम जतुकर्णी था। भवभूति के नाटकों से यह ज्ञात होता है कि इन्हें वेद, दर्शन, धर्मशास्त्र, व्याकरण, काव्यशास्त्र आदि का ज्ञान था।

भवभूति का कालनिर्धारण पूर्वापर सीमा के आधार पर सफलतापूर्वक किया जा सकता है। बाण ने अपने ग्रन्थ हर्षचरित में भवभूति का उल्लेख नहीं किया है। इससे यह सिद्ध होता है कि भवभूति का काल 650 ई. के बाद का ही होगा। वहीं वामन जिनका समय 300 ई. के लगभग है, ने अपने ग्रन्थ 'काव्यालंकारसूत्रवृत्ति' में भवभूति के पद्यों को उद्धृत किया है। अतः भवभूति 750 ई. के पूर्व ही होंगे। 'राजतरंगिणी' और 'गउडवहो' के आधार पर भी भवभूति का काल 750 ई. के बीच ही माना गया है।

3.7.2 कर्तृत्व

भवभूति संस्कृत के सर्वोच्च महाकवियों में गिने जाते हैं। इन्होंने तीन नाटक लिखे हैं – महावीरचरित नाटक, मालतीमाधवम् प्रकरण तथा उत्तररामचरितम् नाटक। भवभूति के तीनों नाटकों का अभिनय, जैसा कि उनकी प्रस्तावना से मालूम पड़ता है, भगवान कालप्रियनाथ के उत्सव पर हुआ था। विद्वानों की सम्मति में उज्जयिनी के महाकाल महादेव का ही दूसरा नाम कालप्रियनाथ है। महावीरचरित तथा मालतीमाधव की प्रस्तावना से पता चलता है कि भवभूति की नटों से घनिष्ठ मित्रता थी, अतः यह स्पष्ट है कि भवभूति के नाटक अभिनय के ही लिये लिखे गये थे।

1) **मालतीमाधवम्** – यह 10 अंकों का प्रकरण नाटक है। इसमें मालती तथा माधव और मकरन्द तथा मदयन्तिका के प्रणय एवं परिणय कथा का कवि ने वर्णन किया है। इसमें नायक और नायिका के प्रणय में बाधा होने पर कामन्दकी दोनों की सहायता करती है। मदयन्तिका पर सिंह का आक्रमण, मकरन्द द्वारा सिंह का मारा जाना, माधव का सिद्धि प्राप्ति के लिए श्मशान जाना, मालती को बलि देने की तैयारी, मालती का अपहरण जैसी अनेक रोमांचक घटनाओं से यह प्रकरण युक्त है।

2) **महावीरचरित** – भवभूति प्रणीत महावीरचरित नाटक में सात अंक हैं। इसमें रामायण के बालकाण्ड से लेकर युद्धकाण्ड तक की कथा का वर्णन है। इसके प्रथम अंक में शिव धनुष तोड़कर राम सीता से विवाह करते हैं। इस पर रावण के क्रुद्ध होने का वर्णन महाकवि ने किया है। द्वितीय अंक में रावण का मन्त्री माल्यवान् राम के विरुद्ध परशुराम को उकसाता है। तृतीय अंक में राम और परशुराम के मध्य वाक्युद्ध का वर्णन है। चतुर्थ अंक में राम-परशुराम वाक्युद्ध में परशुराम पराजित होते हैं। माल्यवान् के षड्यन्त्र से शूपर्णखा कैकेयी की दासी मन्थरा के रूप में कैकेयी का पत्र राम को देती है कि दशरथ के वर के अनुसार राम 14 वर्ष वन में रहें और भरत राजा बनें। पंचम अंक में सीता हरण, जटायु-रावण युद्ध, विभीषण-राम मिलन, बाली वध आदि घटनाओं का वर्णन है। छठें अंक में राम-रावण युद्ध और रावण वध की कथा वर्णित है। सप्तम अंक में सीता की अग्निपरीक्षा, राम का अयोध्या आगमन और राज्याभिषेक का वर्णन किया गया है।

3) **उत्तररामचरितम्** – भवभूति प्रणीत 'उत्तररामचरितम्' में सात अंक हैं। रामायण कथा आश्रित इस नाटक के नायक राम और नायिका सीता हैं तथा करुण अंगी रस है। नाटक के प्रथम अंक में राज्याभिषेक के पश्चात् प्रजानुरंजन में रत श्रीरामचन्द्र जी का वर्णन किया गया है। कुछ समय पश्चात् चित्रकारों द्वारा निर्मित आलेख्यवीथिका में लक्ष्मण, राम व सीता को ले जाते हैं। चित्रदर्शन द्वारा सीता के मन में वन विहार एवं गंगा दर्शन की इच्छा उत्पन्न होती है। उसी

समय दुर्मुख नामक दूत के द्वारा सीता विषयक लोकोपवाद की सूचना मिलती है। अन्त में राम के आदेशानुसार लक्ष्मण सीता को वाल्मीकीय आश्रम में छोड़ आते हैं। द्वितीय अंक में वासन्ती और आत्रेयी के संवाद से सीता विषयक विभिन्न तथ्यों की जानकारी मिलती है। उसी समय रामचन्द्र जी शम्बूक वध हेतु दण्डकारण्य में प्रवेश करते हैं तथा पहले देखे गए दृश्यों को देखकर मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं। शम्बूक वध के पश्चात् रामचन्द्र जी अगस्त आश्रम की ओर प्रस्थान करते हैं। तृतीय अंक छायांक के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें राम पंचवटी में प्रवेश करते हैं। तमसा-मुरला नामक दो नदी देवताओं के संवाद द्वारा वासन्ती से लव-कुश व सीता विषयक वार्ता को सुनकर राम मूर्च्छित हो जाते हैं तब अदृश्यरूपधारिणी सीता राम को होश में लाती हैं। तदनन्तर अश्वमेध यज्ञ के सम्पादन हेतु राम अयोध्या लौट जाते हैं। चतुर्थ अंक में वसिष्ठ-अरुन्धती, राम की मातायें तथा जनक जी अतिथि रूप में वाल्मीकि आश्रम में प्रवेश करते हैं। इस अंक में जनक, अरुन्धती तथा कौशल्या के बीच सीता परित्याग से उत्पन्न स्थिति का बहुत ही मार्मिक वर्णन किया गया है। अंक के अन्त में लव-कुश द्वारा राम के अश्वमेधीय घोड़े को पकड़ने की घटना का वर्णन है। पंचम अंक में चन्द्रकेतु तथा लव के बीच लम्बा संवाद होता है। उसके पश्चात् भीषण संग्राम प्रारम्भ होता है। छठें अंक में लव चन्द्रकेतु संग्राम में राम जी का पदार्पण होता है। युद्ध बन्द होता है। दोनों श्रीराम को प्रणाम करते हैं। लव तथा कुश में सीता की आकृति की समानता देखकर राम प्रसन्न होते हैं तथा वहाँ उपस्थित वसिष्ठ, जनक, कौशल्या आदि को प्रणाम करते हैं। सप्तम अंक गर्भांक है। इस अंक में प्रजा के समक्ष नाटक खेला जाता है जिसमें गंगा तथा पृथ्वी देवता सीता को निर्दोष सिद्ध कर रामचन्द्र को समर्पित करती हैं। जृम्भकास्त्र की सिद्धि से लव-कुश का राम का पुत्र होना निश्चित हो जाता है तथा भरतवाक्य के साथ नाटक की समाप्ति होती है।

3.7.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

संस्कृत भाषा पर भवभूति का असामान्य अधिकार था। वास्तव में भाषा एक दासी की भाँति उनके संकेतों पर चलती है। भवभूति की शैली का विशेष गुण उनका समुचित शब्द विन्यास है। उनका शब्द-शोधन अद्वितीय है। वे अवसर के अनुरूप भाषा का प्रयोग करते हैं। उनकी भाषा तथा भावों में अनुपम सामंजस्य है। भवभूति ललित एवं सुकुमार भावों का वर्णन करते समय समासरहित सरल मधुर पदावली का प्रयोग भी करते हैं। गौडी शैली के धुरन्धर आचार्य होते हुए भी वे वैदर्भी रीति के प्रयोग में पारंगत हैं। क्लिष्ट से क्लिष्ट और सरल से सरल भाषा के प्रयोग में समान रूप से कुशल हैं। भवभूति की रचनाओं में काव्यकला का भावपक्ष ही प्रधान है और कलापक्ष गौड़। मानवीय मनोभावों के विश्लेषण और मार्मिक चित्रण में भवभूति अद्वितीय हैं। भवभूति की भाषा और अभिव्यक्तियाँ संस्कृत कविता में ताजी हवा का झोंका लेकर आती हैं। अनेक अछूते बिम्बों और कल्पनाओं से उन्होंने अपने काव्यसंस्तर को परिपुष्ट किया है। भवभूति ने अपने नाटकों में शृंगार, हास्य, वीर, अद्भुत् आदि सभी रसों का प्रयोग किया है किन्तु वे करुण रस के प्रयोग में सिद्धहस्त थे। उत्तररामचरितम् नाटक में उन्होंने करुण रस का सुन्दर निदर्शन किया है। तृतीय अंक में करुण रस का परिपाक अपने चरम पर है –

एको रसः करुण एव निमित्तभेदात्।

भिन्नः पृथक पृथगिवाश्रयते विर्वतान्।। (उत्तररामचरितम्– 3/47)

भवभूति की उपमायें अपनी नवीनता के कारण आकर्षित करती हैं। भवभूति ने अनुष्टुप् जैसे लघु कलेवर के छन्द का जितनी कुशलता से प्रयोग किया है उतनी ही सिद्धहस्तता के साथ वे लम्बे छन्दों का प्रयोग करते हैं। भवभूति के छन्द प्रयोग की एक बड़ी विशेषता विषय तथा भाव के अनुरूप छन्दों का चयन है।

3.8 अन्य नाटककार

इकाई के इस अंश में आप संस्कृत साहित्य के कुछ अन्य नाटककारों यथा मुरारि, दिङ्नाग, जयदेव आदि के विषय में अध्ययन करेंगे।

3.8.1 मुरारि

भारतीय नाट्यपरम्परा में भास, कालिदास और भवभूति ये तीन शिखर हैं। भवभूति के पश्चात् आज तक संस्कृत में नाट्यरचना की प्रवृत्ति निरन्तर विकसित होती रही और अनेक दिशाओं में सम्पन्न रचनात्मकता को प्रकट करती रही है। मुरारि के पिता मौद्गल्यगोत्रीय श्रीवर्धमान भट्ट थे। इनकी माता का नाम तन्तुमती था। अपने पाण्डित्य के प्रकर्ष और कवित्व के द्वारा उन्होंने 'महाकवि' और 'बाल वाल्मीकि' की उपाधि प्राप्त की थी। मुरारि का उल्लेख कश्मीरी कवि रत्नाकर ने अपने महाकाव्य 'हरविजय' में किया है। हरविजय की रचना 859 ई0 के आसपास हुई। अतएव मुरारि का समय 800 ई0 के आसपास माना जा सकता है। मुरारि नवीं-दसवीं शताब्दी के आस-पास सारे भारत में ख्याति पा चुके थे।

मुरारि का अनर्घराघव नाटक प्राप्त है। अनर्घराघव सात अंकों का नाटक है। इस पर भवभूति के महावीरचरित की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ती है। अनर्घराघव नाटक रामकथा पर आधारित है। इसमें विश्वामित्र के द्वारा राम और लक्ष्मण को यज्ञ की रक्षा के लिये ले जाने के प्रसंग से लेकर रावण-वध के पश्चात् राम के अयोध्या लौटने तक की कथा नाटकीय रूप में प्रस्तुत की गयी है।

मुरारि की शब्दराशि विशाल है, इनकी पदशय्या प्रौढ़ एवं गम्भीर है। इनकी उपमायें प्रायः मौलिक हैं। इनके पद्यों का नाद-सौन्दर्य दर्शनीय है। मुरारि की काव्यात्मक कल्पना बड़ी उर्वर है और इन्होंने अछूते उपमानों से संस्कृत काव्यधारा को समृद्ध करने का प्रयास किया है। श्रृंगार रस में मुरारि की सर्वाधिक रुचि थी। मुरारि अपने पद सौष्ठव तथा व्याकरण के पाण्डित्य के लिये विशेष रूप से सराहे जाते हैं। अनुप्रास तथा श्लेष अलंकार इन्हें विशेष प्रिय था।

3.8.2 राजशेखर

राजशेखर महाराष्ट्र की यायावर नामक क्षत्रिय जाति में उत्पन्न हुए थे। उनके पिता का नाम दुर्दुव और माता का नाम शीलावती था। उनके पिता ''महाराष्ट्रचूड़ामणि'' अकालजलद थे। इनके वंश में सुरानन्द तरल और कविराज जैसे यशस्वी कवि हुए थे। इनका विवाह चाहमान (चौहान) जाति की अवन्तिसुन्दरी नामक एक सुशिक्षित महिला के साथ हुआ था। बालरामायण में इन्होंने अपने को वाल्मीकि, भर्तृमेण्ठ तथा

भवभूति का अवतार बताया है। राजशेखर का स्थितिकाल (900 ई0) के लगभग माना जाता है।

राजशेखर ने चार नाटकों की रचना की– कर्पूरमंजरी, विद्वशालभंजिका, बालरामायण और बालभारत या प्रचण्डपाण्डव। बालरामायण में राजशेखर ने अपने को छः कृतियों का रचयिता बतलाया है। इसमें चार उक्त नाटक हैं। पाँचवाँ ''काव्यमीमांसा'' नामक अलंकार ग्रन्थ है। छठाँ हेमचन्द्र के अनुसार ''हरिविलास'' नामक महाकाव्य है। ''काव्यमीमांसा'' में राजशेखर ने अपने ''भुवनकोष'' नामक एक भौगोलिक ग्रन्थ का उल्लेख किया है। सूक्तिसंग्रहों में भी राजशेखर के नाम से कई पद्य मिलते हैं।

1) **कर्पूरमंजरी**– यह प्राकृत भाषा में चार अंकों का एक ''सट्टक'' (नृत्य प्रधान नाटक) है। इसका कथानक रत्नावली के समान है। इसमें राजा चन्द्रपाल और कुन्तल राजकुमारी कर्पूरमंजरी की प्रणय कथा वर्णित है। कर्पूरमंजरी का पदलालित्य दर्शनीय है। कर्पूरमंजरी नाटिका के पद्यों में महाराष्ट्री और गद्य में शौरसेनी प्राकृत प्रयुक्त हुई है। इसकी प्राकृत में कई प्रान्तीय तथा देशज शब्द आये हैं। नृत्य और संगीत के आद्यन्त समायोजन ने इसे रंगमंच के लिए आकर्षक बना दिया है। कर्पूरमंजरी में हास्य रस का भी अनूठा चित्रण हुआ है।

2) **बालभारत या प्रचण्डपाण्डव** – इस नाटक में दो ही अंक प्राप्त होते हैं। यह महाभारत की कथा पर आधारित नाटक है। प्राप्त दो अंकों में द्रौपदी का स्वयंवर तथा द्यूतक्रीड़ा और द्रौपदी के वस्त्रहरण की घटनाएँ चित्रित हैं।

3) **विद्वशालभंजिका** – यह चार अंको की नाटिका है। इसका भी कथानक कर्पूरमंजरी के समान ही अत्यन्त रोचक है। वासुदेव विष्णु मिराशी ने इसके कतिपय प्रसंगों को ऐतिहासिक माना है। इसमें उल्लिखित पयोष्णी नदी के तट पर हुआ युद्ध युवराजदेव और राष्ट्रकूट नरेश गोविन्द चतुर्थ के बीच 966 ई0 में हुआ। नाटिका में उल्लिखित वीरपाल युवराजदेव का जामाता अमोघवर्ष है, जिसका पक्ष लेते हुए युवराजदेव ने युद्ध किया। इसमें चार अंको में लाटदेश के राजा चन्द्रवर्मा की पुत्री मृगांकवती तथा राजा विद्याधरमल्ल के गुप्तविवाह की कथा निरूपित है।

4) **बालरामायण** – यह दस अंकों का महानाटक है। इसमें रामायण की सम्पूर्ण कथा प्रस्तुत है। यह रामलीला की प्राचीन परम्परा का स्वरूप भी प्रस्तुत करता है। इसके सभी दस अंक दीर्घाकार हैं और पूरे नाटक का अभिनय एक दिन में होना सम्भव नहीं है। इसमें प्रत्येक अंक का नाम एक-एक लीला पर किया गया है।

राजशेखर के नाटकों में प्रवाह की शिथिलता, हास्य रस की न्यूनता तथा नाट्यकला कौशल का अभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। भवभूति की भाँति वे भी अपने नाटकों में पद्यों को दोहराते हैं फिर भी उनका छन्द कौशल अनुपम है। स्रग्धरा और शार्दूलविक्रीडित जैसे दीर्घकाय छन्दों के प्रयोग में वे सिद्धहस्त हैं। प्राकृत में इन छन्दों का वे बड़ी कुशलता से प्रयोग करते हैं। उनके पद्यों में रमणीय गीति-सौन्दर्य, चारु शब्द-विन्यास और ध्वन्यर्थक अनुप्रास दर्शनीय हैं। उनके नाटकों में अनेक सुन्दर लोकोक्तियाँ पाई जाती हैं तथा तत्कालीन सामाजिक जीवन सम्बन्धी रोचक बातें ज्ञात होती हैं। उनका भाषा-कौशल अद्भुत है।

3.8.3 दिङ्नाग

'कुन्दमाला' नामक नाटक सन् 1923 में मद्रास में प्रकाशित हुआ है। कुछ विद्वानों का कथन है कि उसके रचयिता 5वीं शताब्दी के बौद्ध दार्शनिक दिङ्नाग हैं जिनका उल्लेख 'मेघदूत' के 14वें पद्य में हुआ है और जिनको मल्लिनाथ ने उक्त पद्य की अपनी टीका में कालिदास का समकालीन और प्रतिस्पर्धी माना है। इस आधार पर यह भी कहा जाता है कि भवभूति (700 ई0) अपने 'उत्तररामचरित' की रचना में 'कुन्दमाला' से प्रभावित हुए हैं किन्तु नई खोजों के आधार पर उपर्युक्त मत सर्वथा निराधार सिद्ध हो चुका है। 'कुन्दमाला' का सर्वप्रथम उल्लेख रामचन्द्र गुणचन्द्र कृत नाट्यदर्पण (1100 ई0) में मिलता है। भवभूति के पूर्ववर्ती साहित्य में कहीं भी 'कुन्दमाला' का कोई उल्लेख नहीं मिलता। अतएव कुन्दमाला के कर्ता ''दिङ्नाग'' भवभूति के परवर्ती प्रतीत होते हैं और उनका स्थितिकाल (1000 ई0) के लगभग माना जा सकता है क्योंकि 1100 ई0 के पूर्व उनका साहित्य में कहीं उल्लेख नहीं मिलता।

कुन्दमाला नाटक में 6 अंक हैं। कुन्दमाला के प्रथम अंक में लक्ष्मण गर्भवती सीता को राम के आदेश से गंगा तट पर छोड़ आते हैं। महर्षि वाल्मीकि सीता को अपने आश्रम में आश्रय देते हैं। द्वितीय अंक में लवकुश का जन्म होता है। तृतीय अंक में लवकुश और सीता नैमिषारण्य में पहुँचते हैं। चतुर्थ अंक में तिलोत्तमा नामक अप्सरा राम के सम्मुख सीता का रूप धारण करके उन्हें और अधिक सन्तप्त करती है। पंचम अंक में लवकुश राम के सम्मुख रामायण का गान परायण कर रहे हैं। छठें अंक में पृथ्वी-देवी स्वयं प्रकट होकर सबके सम्मुख सीता की पतिव्रता की घोषणा करती हैं और अन्त में राम, सीता, लव और कुश का आनन्ददायक पुनर्मिलन होता है।

कुन्दमाला और भवभूति के उत्तररामचरित में बहुत कुछ समानता दृष्टिगोचर होती है। दोनों का कथानक रामायण के उत्तरकाण्ड की कथा पर अवलम्बित है। दोनों सुखपर्यवसायी हैं। दिङ्नाग के वर्णन प्रायः रूढ़ि सम्मत होते हैं तथा उनकी कविता भी मध्यम श्रेणी की है फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि उत्तररामचरित जहाँ रस एवं भाव की दृष्टि से सुन्दर एवं श्रेष्ठ है, वहाँ ''कुन्दमाला'' क्रियाशीलता की दृष्टि से अधिक प्रभावोत्पादक है। दिङ्नाग की शैली प्रासादिक और सरल है तथा उनकी भाषा में दुरूहता नहीं है। लम्बे समासों का प्रायः अभाव है। उन्होंने करुण रस की सुन्दर व्यंजना की है। कुन्दमाला में कुछ स्थलों पर खण्डित वाक्य मिलते हैं। उसकी प्राकृत में भी कहीं-कहीं कुछ ऐसे प्रयोग हैं, जिनका संस्कृत रूपान्तर नहीं हो सका है। कुन्दमाला के अधिक अध्ययन तथा प्रचार से इन त्रुटियों पर प्रकाश पड़ने की सम्भावना है।

3.8.4 जयदेव

संस्कृत साहित्य के इतिहास में जयदेव नाम के दो महाकवि विशेष ख्यात हैं– एक प्रसन्नराघव नाटक के रचयिता जयदेव तथा दूसरे गीतगोविन्द काव्य के प्रणेता जयदेव। प्रसन्नराघवकार जयदेव ललित कवि होने के साथ एक प्रखर पण्डित और उच्चकोटि के तार्किक भी थे। न्यायदर्शन के आचार्यों में ये पक्षधर मिश्र के नाम से विख्यात हैं। ये कौडिन्यगोत्र के थे तथा कुण्डिनपुर (विदर्भ) के निवासी थे। इनकी माता का नाम सुमित्रा तथा पिता का नाम महादेव था। पीयूषवर्ष के नाम से भी ये संस्कृत साहित्य में विख्यात हैं। जयदेव का समय 1200 ई0 से 1250 ई0 के लगभग स्वीकार किया जा सकता है।

जयदेव प्राणीत प्रसन्नराघव नाटक सात अंको का है। इसमें रामायण की कथा अनेक रोचक परिवर्तनों के साथ चित्रित है। प्रसन्नराघव नाटक रामकथा पर आधारित नाटकों में बहुत लोकप्रिय रहा है।

आरम्भ के चार अंको में बालकाण्ड की कथा विन्यस्त है। चौथे अंक में राम-सीता विवाह तथा परशुराम के पराभव की कथा है। पाँचवें अंक में घटनाओं के वर्णन में कवि की अनूठी सूझ दिखाई पड़ती है। छठें अंक में विरही राम को विद्याधर माया द्वारा लंका की घटनाएँ दिखाते हैं। सातवें अंक में रावण-वध कर राम आकाश मार्ग से अयोध्या लौट आते हैं। कथागायन की शैली का प्रयोग तथा काव्यात्मक वर्णनों की विपुलता के कारण प्रसन्नराघव की संरचना लीला नाटकों से साम्य रखती है।

जयदेव का संस्कृत भाषा पर असामान्य अधिकार था। उनकी भाषा में अद्‌भुत विलास एवं लालित्य है। पदशय्या इतनी मसृण एवं उदार है कि भाषा में अपूर्व रमणीयता आ गई है। इनकी शैली बड़ी ही प्रांजल, प्रासादिक परिष्कृत एवं मधुर है। इनकी उपाधि पीयषूवर्ष सर्वथा उचित है। जयदेव के संवादों में नाटकीयता मुग्ध करने वाली है। उक्ति-प्रत्युक्ति और संवादों का चुटीलापन देखते ही बनता है। प्रसन्नराघव में जितना नाटकीय सौन्दर्य नहीं है उससे कहीं अधिक सूक्ति सौन्दर्य है।

बोध प्रश्न 2

1) निम्नलिखित में सही विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये।

i) हर्ष के पिता का नाम है – राज्यवर्धन/प्रभाकरवर्धन

ii) रत्नावली है – भाण/नाटिका

iii) उत्तररामचरितम् नाटक में अंक हैं – 7/8

iv) राजशेखर की माता का नाम है – शीलावती/कलावती

v) कुन्दमाला नाटक में अंक है – 6/7

vi) प्रसन्नराघव नाटक के प्रणेता हैं – मुरारि/जयदेव।

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए

क) भवभूति

ख) हर्ष

ग) मुरारि

घ) जयदेव

3.9 सारांश

इस इकाई में आपने संस्कृत नाट्य साहित्य के प्रमुख नाटककारों यथा भास, कालिदास, शूद्रक, विशाखदत्त, हर्ष तथा भवभूति कवि के जीवन-वृत्त, कर्त्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन किया। भास का संस्कृत नाट्य साहित्य में प्रमुख स्थान है। उन्होंने रामायण, महाभारत, उदयन की कथा को आधार बनाकर अपने नाटकों का प्रणयन किया। उनके नाटकों में भाषा का सरल और मनोरम प्रयोग देखा जा सकता है। महाकवि कालिदास ने तीन नाटकों का प्रणयन किया जिनमें अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक विशेष प्रसिद्धि है। 'काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला' इस उक्ति वाक्य

से शाकुन्तलम् नाटक की प्रसिद्धि का अनुमान लगाया जा सकता है। शूद्रक कवि प्रणीत मृच्छकटिक प्रकरण में नायक चारुदत्त और वसन्तसेना के प्रणय का वर्णन बड़ी ही सुन्दर शैली में किया गया है। राजपरिवार से सम्बन्ध रखने वाले विशाखदत्त प्रणीत मुद्राराक्षस नाटक संस्कृत साहित्य का ऐसा नाटक है जो विदूषक एवं नायिका से रहित होने के बाद भी पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करता है। नागानन्द, रत्नावली और प्रियदर्शिका के प्रणेता हर्ष को कौन नहीं जानता? हर्ष प्रभाकरवर्धन के पुत्र और दानवीर राजा थे। करुण रस के प्रयोग में निष्णात् भवभूति प्रणीत उत्तररामचरितम् में राम और सीता के उदात्त प्रेम का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त इस इकाई में आपने मुरारि विरचित अनर्घराघव, राजशेखर प्रणीत कर्पूरमंजी आदि नाटक एवं नाटककारों के विषय में जानकारी प्राप्त की।

3.10 शब्दावली

अंकित – लिखा हुआ

संस्कृतज्ञ – संस्कृत को जानने वाला

लोककथा – लोक में प्रचलित कथा

दक्षिणा – दान

मनोरथ – इच्छा

विन्यस्त – स्थापित

जन्मना – जन्म से

साम्य – समानता

3.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) संस्कृत साहित्य का इतिहास– डॉ. उमाशङ्कर शर्मा 'ऋषि', चौखम्भा साहित्य एकेडमी, वाराणसी।

2) संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास– डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

3) संस्कृत साहित्य का बृहद् इतिहास– बलदेव उपाध्याय, शारदा मन्दिर, वाराणसी।

3.12 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) (i) असत्य (ii) सत्य (iii) सत्य (iv) असत्य (v) सत्य (vi) सत्य

बोध प्रश्न 2

1) (i) प्रभाकववर्धन (ii) नाटिका (iii) सात (iv) शीलावती (v) छः (vi) जयदेव

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।